कथादेश अखिल भारतीय हिन्दी लघुकथा प्रतियोगिता-13

पुरस्कृत लघुकथाओं में प्रथम को रु. 5000/- द्वितीय को 3000/- और तृतीय को 2000/- की राशि प्रदान की जायेगी. शेष सात लघुकथाओं के लिए प्रत्येक को 1000/- दिये जायेंगे.

पहला पुरस्कार प्राप्त लघुकथा

मीनू खरे

सम्प्रति भारतीय प्रसारण सेवा (IBS) में कार्यरत, आकाशवाणी लखनऊ में सहायक निदेशक/कार्यक्रम प्रमुख के रूप में पदासीन.

भौतिक विज्ञान में परास्नातक, पत्रकारिता, संगीत और शिक्षा में स्नातक डिग्री प्राप्त. इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के विभिन्न फॉर्मेट में वृहद लेखन, हाइकु, लघुकथा, कहानी, लेख आदि का लेखन, समाचार पत्रें में व्यंग्य कॉलम लेखन. दो हाइकु संग्रह 'खोयी कविताओं के पते' और 'जुगनुओं की वसीयत' प्रकाशित. पद्मश्री डॉ. विष्णु श्रीधर वाकणकर राष्ट्रीय सम्मान 2021, लघुकथा स्वर्ण जयन्ती पुरस्कार 2021 , हिंदी में बच्चों के लिए प्रसारित सर्वश्रेष्ठ रेडियो कार्यक्रम हेतु यूनिसेफ मुख्यालय, न्यूयॉर्क से प्राप्त ग्लोबल पुरस्कार समेत पंद्रह से अधिक राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित.

मो. : 7017770395

E-mail : meenukhare@gmail.com

सीक्रेट पार्टनर

मीनू खरे

चाइल्ड-काउंसलर चित्रा बेहद अपसेट थी. इसलिए नहीं कि एक 10 साल की बच्ची के साथ अपने ही घर में रोज दरिंदगी हो रही थी, ना ही इसलिए कि शराबी बाप ही मासूम से वेश्यावृत्ति करवा रहा था. ऐसे घिनौने केस तो चित्रा पहले भी डील कर चुकी थी पर आज का केस बिल्कुल जुदा था. इस बच्ची को तो यह तक पता न था कि उसके साथ कुछ गलत भी हो रहा है. उसे समझाया गया था कि यही परिवार की मदद का तरीका है. रोज की हैवानियत के कारण बिस्तर लग चुकी बच्ची दुखी थी कि बीमारी के कारण वो घर चलाने को 'जरूरी मदद' नहीं कर पा रही. बाल शोषण के इस नये वेरिएन्ट ने चित्रा को अन्दर तक हिला दिया था. मन हल्का करने को वो इस समय तफसील से अपने क्लीनिक पार्टनर संदीप के साथ फोन पर थी.

"बच्ची शेल्टर होम जाने को तैयार ही नहीं थी! उसकी इच्छा जल्दी स्वस्थ होकर फिर से 'परिवार की मदद' करने की थी! जबरदस्ती शेल्टर होम ले जाते समय अपराध बोध से ग्रस्त बच्ची ने घर की दीवार पर लिखा-- सॉरी पापा!"

"वेरी स्ट्रेंज ऐंड सैड!" निराश भाव से संदीप बोला.

चित्रा ने कहा– "ज्यादातर बच्चे यौन शोषण से अनजान होते हैं. आजकल लोग ऐसे बच्चों को बरगलाकर उस ऐक्ट को जस्टिफाई कर देते हैं जिसके बाद बच्चे विरोध नहीं करते और शोषण आसान हो जाता है."

"हमें बच्चों को यौन अपराधों के बारे में बताना चाहिए." संदीप की इस बात से चित्रा असहमत थी. वो बोली– "इससे बच्चों की मासूमियत नहीं छिन जायेगी?" उसके लिए अभिभावक सतर्क रहें न कि बच्चों को गन्दगी में खींचा जाय." दृढ़ता से कहकर चित्रा ने फोन रख दिया. उसकी नौ वर्षीय बेटी मून अब कमरे में आ चुकी थी.

"किसका फोन था?"

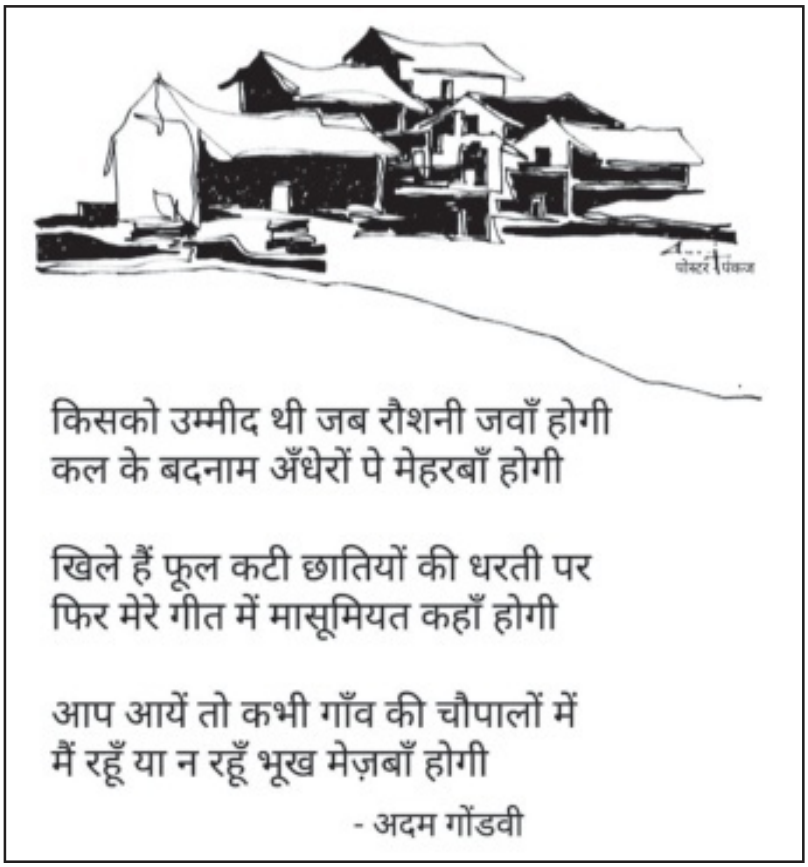

कविता पोस्टर : पंकज दीक्षित

"पार्टनर अंकल का."

"तुम उन्हें पार्टनर क्यों कहती हो मम्मी?"

"क्योंकि वो क्लीनिक में मेरे पार्टनर हैं."

"पापा भी तो तुम्हारे पार्टनर हैं!"

"वो मेरे लाइफ पार्टनर हैं."

"मम्मी तुम्हारा सीक्रेट पार्टनर कौन है?"

"सीक्रेट पार्टनर तो कोई भी नहीं है मेरा!"

"झूठ! हर किसी का एक सीक्रेट पार्टनर जरूर होता है मम्मी!"

"अच्छा! ये सीक्रेट पार्टनर होता कौन है?"

"जिसके साथ आप अकेले में बिना डरे चले जाते हो. जो आपकी बॉडी में कहीं पर भी टच करे तो आप करने देते हो. आप रोते नहीं, ना ही किसी को बताते हो."

बेहद सशंकित हो चुकी चित्रा ने पूछा– क्या तुम्हारा भी कोई सीक्रेट पार्टनर है मून?"

"वो तो सबका होता है!"

चित्रा धैर्य खो रही थी– "कौन है तुम्हारा सीक्रेट पार्टनर मून?"

"सीक्रेट पार्टनर का नाम सीक्रेट रखते हैं मम्मी नहीं तो पापा की डेथ हो जाती है!" मून ने समझाते हुए कहा.

चित्रा सन्दीप का नम्बर मिला रही थी.

▣

दूसरा पुरस्कार प्राप्त लघुकथा

अपना अपना चाँद

चाँदनी समर

उस बड़े से बँगले के बाहर वो रोड लैम्प. जिसके नीचे रोज ही झोपड़पट्टी का एक बच्चा आ बैठता है. मगर आज वहाँ एक और बच्चा आ बैठा है. पहले बेच्चे ने उसे आश्चर्य से देखा-- आह! कितना सुंदर है ये. लगता है किसी दूसरी दुनिया से आया हो जैसे. उसने सुंदर शोख कपड़े पहन रखे थे. पैरों में जूते मोजे, आँख में सम्पन्नता की झलक और चेहरे पर थोड़ा सा क्रोध. झोपड़पट्टी का बच्चा उसे यूँ ही ताकता रहा कुछ बोलने की हिममत नहीं हुई. पता नहीं वो उसकी भाषा समझ भी पायेगा या नहीं. सुंदर बालक भी उसे आश्चर्य से देख रहा था. फटे कपड़े, नंगे पांव, आँखों में दरिद्रता. कुछ देर उसने गौर से उसे देखते हुए पूछा, "कौन हो तुम??"

"जी मैं विकास हूँ." गरीब लड़के ने थोड़ा झिझकते हुए कहा.

"कहाँ रहते हो?" सुंदर बालक ने पुनः पूछा.

"जी मैं सड़कों पे रहता हूँ. मेरा मतलब है सड़कों के किनारे झोपड़पट्टी में. तुम कौन हो? कहाँ रहते हो?" गरीब लड़के ने भी पूछा.

"मैं, मैं स्वप्न हूँ. बंगले में रहता हूँ."

"अच्छा... तुम्हें पहले कभी यहाँ नहीं देखा." विकास ने पूछा.

"मैं यूँ ही सड़कों पर नहीं निकलता. अपने बँगले में ही रहता हूँ." स्वप्न ने उत्तर दिया.

"अच्छा तो आज यहाँ कैसे??"

"बस छुप के भाग आया हूँ. मम्मी खाने के पीछे पड़ी रहती है. भला कितना खाऊँ."

स्वप्न ने मुँह फुलाते हुए कहा.

"अच्छा! तुम्हें बहुत खाने को मिलता है?"

विकास ने चकित होकर पूछा.

"हाँ, बहुत."

"क्या क्या."

"ब्रेड, बटर, पिज्जा, पाश्ता, मिल्क, फ्रूट, चिकन, बिरयानी."

विकास आश्चर्य से उसका मुँह ताक रहा था. कुछ ना समझकर उसने सीधे पूछा.

"रोटी मिलती है क्या?"

"रोटी? हाँ. मगर मैं रोटी नहीं खाता. मुझे पसंद नहीं."

"क्या!!! विकास की आँखें आश्चर्य से फटी रह गयीं."

चाँदनी समर

रिजवाना यासमीन उर्फ चाँदनी समर
शैक्षणिक योग्यता : एम.ए.
पेशा : शिक्षिका
प्रकाशित रचनाएँ : वेदना की उड़ान (उपन्यास). कई रचनाएँ विभिन्न राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय पत्रिकाओं में प्रकाशित.
सम्मान : पांच राष्ट्रीय एवं एक अंतरराष्ट्रीय सम्मान प्राप्त.
साहित्यिक गतिविधि में लगातार सक्रिय एवं लघु फिल्म निर्माता. प्रसारित फिल्म "किरण a ray of life". आने वाली फिल्म- Rainbow colors of dream.
E-mail : chandnisamer1@gmail.com

पोस्टर : पंकज दीक्षित

"हाँ. इतना खाना भला कौन खा सकता है... मोटा हो जाऊँगा. मेरे स्कूल में वो बंटी है ना, बहुत मोटा है वो. में वैसा नहीं बनना चाहता. सोचता हूँ चाचू के साथ जिम ज्वाइन कर लूँ. कुछ बॉडी बन जाएगी."

स्वप्न अपनी धुन में अपने मन की बात सुनता रहा जबकि विकास का ध्यान तो अब भी रोटी पर अटका था. सुबह से एक भी जो न मिली थी. कुछ देर बाद जब स्वप्न चुप हुआ तो विकास सन्न था उसे तो उसकी कोई बात समझ न आयी सो वो कुछ न बोला. फिर दोनों बच्चे चाँद की ओर देखने लगे.

"मम्मी कहती है मुझे चाँद को पाना है. मुझे भी चाँद बहुत पसंद है. एक दिन मैं चाँद को पा के रहूँगा." स्वप्न ने प्रसन्नता भरे स्वर में कहा. विकास भी चाँद को देख रहा था खोये स्वर में बोला,

"हाँ मुझे भी चाँद चाहिए. पर आधा नहीं पूरा. माँ जब तवे पर पकाती है तो कितना सुंदर लगता है ना. फूली-फूली, गोल-गोल. मगर आधा ही देती है. आधा छुटकी को दे देती है."

"कितना सुंदर है ना ये चाँद. एक दिन में ऐस्ट्रोनेट बनूँगा और तब इसे पा लूंगा." स्वप्न ने दृढ़ता भरे स्वर में कहा.

"हाँ मुझे भी चाँद चाहिए. फूली-फूली गोल-गोल."

विकास खोए-खोए स्वर में बोला.

दोनों अपने-अपने चाँद को देख रहे थे जब सामने के बँगले से चौकीदार निकला.

"बाबा आप यहाँ बैठे हैं. मैडम जी आपको कब से ढूंढ रही हैं. चलिए घर चलिए."

स्वप्न उठा. उसने विकास को अपने साथ चलने को कहा तो वाचमैन ने टोका.

"नहीं बाबा ये आपके साथ नहीं चल सकता. आप दोनों के रास्ते अलग हैं."

फिर दोनों अपने-अपने रास्ते निकल गये. स्वप्न बँगले की ओर और विकास सड़क की ओर.

▣

तीसरा पुरस्कार प्राप्त लघुकथा

गुमशुदा जिंदगी

मुकुल जोशी

कक्षा नौ में प्रवेश लेते ही राजू के पापा ने राजू का एडमिशन नारायना आइआइ टी कोचिंग इंस्टिट्यूट में करा दिया ताकि अभी से बारहवीं कक्षा में पहुँचने तक उसे आई.आई.टी. परीक्षा के लिए तैयार किया जा सके. राजू के पापा ऑफिस जाने से पहले रोज ही राजू को कोचिंग इंस्टिट्यूट के गेट तक छोड़ आते. घर से स्कूल को निकलते समय आज सुबह पत्नी ने पति को याद दिलाया कि राजू को छोड़ने के बाद लौटते हुए कुछ फल आदि लेते आएं, आज शिवरात्रि के व्रत के लिए. राजू को कोचिंग इंस्टिट्यूट के गेट के पास छोड़ते ही उन्हें पत्नी की बात याद आ गयी और वे गेट के पास ही लगी फलों की रेड़ियों की तरफ बढ़े.

"आइए साब! क्या लेंगे? –आम, सेब, पपीते, केले..."

राजू के पापा कुछ देर तक फलों को हाथ में लेकर सूँघते रहे, फिर रेड़ी वाले से बोले– "कार्बाइड से पके लगते हैं, वरना फरवरी में आम! और ये पपीते भी तो नेचुरल नहीं लग रहे, कार्बाइड से पककर पिलपिले हो गये हैं. एकदम पीले. हरापन है ही नहीं."

"उस तरफ देखिए. इंस्टिट्यूट जाते, भारी-भरकम स्कूल-बैग के बोझ से झुके इन बच्चों को भी तो समय से पहले ही पकाया जा रहा है. सुबह आठ बजे से शाम के पाँच बजे तक. न खेलने-कूदने का समय, न घर में फुरसत और न ही माँ-बाप के पास इनसे बात करने की फुरसत. बस ट्यूशन लगाकर, कोचिंग सेंटर में भेजकर, लैपटॉप-मोबाइल दिलाकर वे इससे अपनी इतिश्री समझ लेते हैं. तभी तो असमय बूढ़े हो रहे हैं आज के नौजवान" –रेड़ी से फल खरीद रहे एक सभ्रांत से बूढ़े व्यक्ति ने कहा.

"समय ही कॉम्पीटिशन का है. सर्वाइवल ऑफ द फिटेस्ट! कुछ पाने के लिए कुछ खोना तो पड़ता ही है" –राजू के पापा बोले.

"जनाब इनको तो हर रोज बस जिन्दा रहने के लिए ही कॉम्पीटिशन करना है ताकि हर रोज इनके घर चूल्हा जल सके. नेचुरल तरीके से पके फल यदि ये बेचने लगें, तब तक तो इनकी भूख इंतजार नहीं कर पाएगी."

फल खरीदकर जब राजू के पापा वापस कार की तरफ जाने लगे तब उन्हें महसूस हुआ कि बंदे की बात में दम तो है. वे रुके और गेट से अंदर जाते बच्चों को देखने लगे. स्कूल प्रांगण में कोई कोलाहल नहीं था. बचपन-लड़कपन का वो खिलदंड़पन गायब था जो कभी उनके स्कूल-कॉलेज के दिनों में अपने चरम पर था. झुके कन्धों से जमीन की तरफ नजर गढ़ाये गुमसुम चलते-बच्चे ठीक रोबो की तरह वैसे ही जा रहे थे जैसे वे अब अपने ऑफिस को जाते हैं और पत्नी अपने स्कूल को.

▣

मुकुल जोशी

शिक्षा : एम.ए. (अंग्रेजी), एम.एड. देश की लगभग सभी साहित्यिक पत्रिकाओं में कहानियाँ प्रकाशित. 'मैं यहाँ कुशल से हूँ.' कहानी संग्रह प्रकाशित. दूसरा कहानी संग्रह शीघ्र प्रकाशनाधीन. अनेक लघुकथायें प्रकाशित.

मो. : 9591701924

चौथा पुरस्कार प्राप्त लघुकथा

वचन

डॉ. पूरन सिंह

मैंने ठाकुर साहब की खूब सेवा सुश्रूषा की थी. कितनी ही बार तो अपनी जान पर खेलकर दुश्मनों से उनकी जान बचायी थी. वे अपने सभी साथियों और समाज के लोगों से हमेशा यही कहते, "मंगुआ, मेरा नौकर नहीं मेरा भाई है. कई बार तो मुझे ऐसा लगता है कि यह जिन्दगी इसी की दी हुई है. यदि यह नहीं होता तो मेरे दुश्मनों ने न जाने कब का मुझे ठिकाने लगा दिया होता. मैं इसका ऋणी हूँ."

यह सब सुनकर मेरा सीना चौड़ा हो जाता था और मैं और अधिक ईमानदारी, निष्ठा और समर्पण से उनकी सेवा करता. एक दिन वे जिद पर उतर आये थे, "मंगू आज मैं बहुत खुश हूँ. आज तू जो भी मांगेगा वही दूंगा. आज तू मुझसे मेरी हवेली तक मांगे तो दूंगा. इतना ही नहीं यदि तू आज ठकुराइन तक को मांगे तो मैं मना नहीं करूंगा."

"क्या!, क्या!! मालिक आप अन्नदाता हैं और ठकुराइन तो मेरे लिए देवी के समान हैं आप मुझ पर पाप मत चढ़ाइए." मैं हाथ जोड़े खड़ा था.

"नहीं, मंगू आज मांग लो. मैं दूंगा. यह एक ठाकुर का वचन है." ठाकुर साहब अपनी ठकुराइत पर आ गये थे.

मैंने भी हिम्मत की थी, "ठाकुर साहब मांगना तो कुछ नहीं लेकिन आज तक मैंने भी आपकी कोई बात टाली नहीं. आपका हुक्म मेरे लिए भगवान का आदेश रहा. आज मुझे एक चीज दे दीजिए."

"क्या"

"आप सिर्फ एक दिन के लिए मगुआ चमार बन जाओ." मेरे मन में छिपी सदियों की पीड़ा साक्षात् होने लगी थी.

"हरामजादे.... नीच... कमीने... आ गया न अपनी औकात पर... जो मैं नहीं दे सकता वही मांगता है कुत्ते, मेरी जान मांग लेता लेकिन..." फिर क्या था ठाकुर साहब ने मुझे छड़ी से मारना शुरू किया तो रुके ही नहीं थे. मैं फड़फड़ा रहा था और ठाकुर साहब लगभग पागल हुए जा रहे थे तभी ठकुराइन ने आकर उनका हाथ रोक दिया था. यहाँ तक मुझे याद है. इसके बाद जब मुझे होश आया तो मैं अपनी झोपड़ी में था. मेरी पत्नी मेरे शरीर पर फाहे लगा रही थी. मैं कराह रहा था तभी मेरी पत्नी ने पूछ लिया था "आखिर हुआ क्या था."

"कुछ नहीं, ठाकुर अपना वचन हार गया."

▣

डॉ. पूरन सिंह

जन्म : 10 जुलाई 1964 (मैनपुरी. उत्तर प्रदेश)

शिक्षा : एम.ए. (अंग्रेजी-हिन्दी) 'सत्तरोत्तरी हिन्दी कहानियों में नारी' विषय पर पीएच.डी.

पुरस्कार/सम्मान : विभिन्न प्रतिष्ठित साहित्यिक संस्थाओं द्वारा अनेक सम्मान और पुरस्कार.

हिन्दी अकादमी दिल्ली द्वारा कहानी नरेशा की अम्मा उर्फ भजोरिया पर श्रीरामसेंटर दिल्ली में नाट्य मंचन का आयोजन.

प्रकाशन : 5 कहानी संग्रह-पथराई आंखों के सपने, साजिश, मजबूर,पिंजड़ा और रिश्ते तथा 6 लघुकथा संग्रह - महावर, वचन, सुराही, दिदिया, इंतजार,100 लघुकथाओं का संग्रह तथा 64 दलित लघुकथाएं एवं कविता संग्रह-विद्रोह प्रकाशित.

उड़िया/मराठी/पंजाबी/बंगला/उर्दू/अंग्रेजी आदि में विभिन्न रचनाओं का अनुवाद प्रकाशित.

संपर्क : 240 बाबा फरीदपुरी, वेस्ट पटेल नगर,नई दिल्ली-110008

मो. : 9868846388

पांचवाँ पुरस्कार प्राप्त लघुकथा

नृशंस

अश्विनी कुमार आलोक

अश्विनी कुमार आलोक

जन्म : 8 दिसंबर 1975

शिक्षा : साहित्य, पत्रकारिता एवं शिक्षा विषयों में स्नातकोत्तर. मानद पीएच.डी.

लेखन : विद्यार्थी जीवन से देश की शीर्षस्थ पत्र-पत्रिकाओं में साहित्य, सामयिक विषयों पर विश्लेषणपरक आलेख तथा स्तंभ लेखन. लोकसाहित्य, लघुकथा, कथा, उपन्यास, समालोचना और अन्य विधाओं में लिखित एवं संपादित कुल अट्ठाईस पुस्तकें प्रकाशित.

पत्रकारिता : ढाई दर्जन से ऊपर पत्र-पत्रिकाओं के मुख्य संपादक, सहायक संपादक रहे.

संप्रति : स्वतंत्र लेखन और अध्यापन.

सम्पर्क : प्रभा निकेतन, पत्रकार कॉलोनी, महनार, वैशाली,बिहार-844506

मो. : 8789335785

E-mail : ashwinikumaralok@gmail.com

"इसमें किस्से जैसा कुछ नहीं है, न ही यह बात हर किसी से कहने की है." मेरे बेटे ने टूथब्रश पर पेस्ट लगाते हुए मेरी ओर उपेक्षा से देखा, तो मैं सहम गया और पत्नी की ओर देखकर बोलने लगा. मेरे किस्से में उसकी भी रुचि नहीं थी, वह बिछावन को इत्मीनान से तह करती रही. पर मैंने अपना दृष्टांत जारी रखना अपना आत्माभिमान माना, "हद तो यह है कि शिक्षा विभाग के जिला कार्यालय के दरवाजे पर यह घटना घटी, वह भी दो-चार लोगों के सामने. मैं भले ही एक शिक्षक से प्रखंड शिक्षा पदाधिकारी के रूप में प्रोन्नत हुआ हूँ, लेकिन अब तो एक अधिकारी हूँ. वह बड़े अधिकारी का आदेशपाल है, तब भी तो आदेशपाल ही है ना. वह मेरा रास्ता रोककर खड़ा हो गया. बेहूदगी तो यह कि काँख में फाईल को दबाकर खैनी मलते हुए बोलने लगा, "ऐसे काम नहीं चलेगा बीइओ साहब, आज तो माल डाफन करना ही पड़ेगा." मैंने उसकी मंशा का सही अर्थ लगाकर उसी की भाषा में समझाया, "अभी तो बीइओगिरी सीख ही रहा हूँ सब होगा." पर वह अड़ा रहा, दीवार पर मेरे सामने ही ऐसे थूका कि मैं सचेत न रहता तो मेरे पैंट पर उसकी छींटे पड़ जाते. मेंने पचास का नोट उसकी ओर बढ़ाया. उसके होठों पर प्रतापपूर्ण मुस्कान फैल गयी. मेरी ओर दयाभाव से देखकर अपने शर्ट की जेब में हाथ डाला, तह करके रखे सौ-सौ के कुछ नोटों में से एक खींचकर मेरी ओर बढ़ा दिया. मेरा झेंपना स्वाभाविक था. पर उसने मेरा रास्ता छोड़ने के साथ वह नोट दुबारा अपनी जेब में रख लिया, तो मैंने भी गुस्सा अपने काबू में कर लिया. इतना ही नहीं. बड़े साहब के हुजूर में हाजिर हुआ, तो उन्होंने जो कहा, वह सुनकर मैं गश खाकर गिर न गया, यही गनीमत समझो. बड़े साहब ने कहा, "तीन ब्लॉक, छह सौ तेरह स्कूल. बहुत अपेक्षा से तुम्हें तीनों का प्रभार दिया है. आदेशपाल की तरह मेरी ओर पचास का नोट न बढ़ा देना. अब तुम शिक्षक नहीं रहे, हाकिम हो गये हो." मैं सिर झुकाये लौट आया.

मेरी कथा खत्म हो चुकी थी. पता नहीं, मेरी पत्नी ने इसका कितना अंश सुना था. वह बगैर कुछ बोले अंदर चली गयी. बेटे ने पी पिच्च-से थूका और बेसिन से चेहरा हटाकर तौलिये से पोंछता हुआ अंदर चला गया.

▣

छठा पुरस्कार प्राप्त लघुकथा

इंटरव्यू

प्रदीप तिवारी 'धवल'

का नाम है?

सर, तेजरूप अवस्थी.

मुला मारसीट मा तो खाली तेजरूप लिखा है?

साहेब बप्पा कहत हैं कि जस अधिकारी औ सरकार रहे वइसन नाम जोड़-घटाय लेहेव. तौ वही कीन.

अच्छा! हुसियार तो बहुत हौ.

बाबा परशुराम जी की कृपा है.

केत्ता पढ़े हो?

साइंसाइड बी.ए. हन सरकार.

हम्म्म्म... मतलब बी एस सी. ड्राइविंग लाइसेंस कमर्शियल वाला है?

हाँ सर, पिछली सरकार रही तौ बनवाए रहेन.

औ अनुभव केतना है?

साढ़े चार साल कै.

केतनी पगार मिलत रही?

पचहत्तर सौ रुपय्या.

कउन गाड़ी चलावत रहेव?

स्वर्ग विमान यानी लहास ढोवय वाली गाड़ी.

ठीक है, नगर निगम वाली कूड़ा-गाड़ी चलावै का है, पूरे नौ हजार रुपया पगार मिली, कूड़ा-गाड़ी चलइहौ?

माफ किहेव साहेब, बाभन होइके आपसे ई उम्मीद नहीं रही, मेहतर समझेव है का?

▣

प्रदीप तिवारी 'धवल'

जन्म : 10 मार्च 1971, ग्राम-मिश्रौली, पोस्ट-जगदीशपुर, जनपद-अमेठी, उ.प्र.

कृतियाँ : 1. 'चल हंसा वाही देस' मुक्तक काव्य, 2. 'अगनित मोती', 3. 'मौन नहीं रह पाउँगा' काव्य संग्रह, 4. 'अंतर्जाल मा नौनिहाल' अवधी निबंध.

संपादन : उप-संपादक के रूप में अवध ज्योति का 10 वर्षों से संपादन.

सम्मान : 'सृजन सम्मान' यू.पी. प्रेस क्लब, लखनऊ. 'अवध ज्योति रजत जयंती सम्मान'. साहित्य श्री' अखिल भारतीय हिंदी विधि प्रतिष्ठान, बहराइच वर्ष-2017. 'साहित्य सेवा सम्मान'. 'सारस्वत सम्मान' भारत नेपाल अवधी परिषद.

सम्पर्क : जी-801, बेतवा अपार्टमेंट, सेक्टर-4, गोमती नगर विस्तार, लखनऊ

मो. : 9415381880

E-mail : raghvendu1288@gmail.com

सातवाँ पुरस्कार प्राप्त लघुकथा

इस प्यार को क्या नाम दूँ

डॉ. संध्या तिवारी

डॉ. संध्या तिवारी

जन्म : 15 अक्टूबर 1970, शाहजहाँपुर
संकलन : साँझा काव्य संग्रह, श्रेष्ठ काव्य माला, मुट्ठी भर अक्षर, बूँद बूँद सागर, लघुकथा अनवरत, क्षितिज अपने अपने, पड़ाव और पड़ताल (खण्ड 26), नई सदी की धमक, आस-पास से गुजरते हुए, समकालीन प्रेम विषयक लघुकथाएँ,.
संग्रह : 'राजा नंगा है' (ई बुक संग्रह) 'ततःकिम' लघुकथा संग्रह, 'अंधेरा उबालना है' लघुकथा संग्रह 2020.
सम्पादन : अविराम साहित्यिकी (त्रैमासिक पत्रिका) काफी हाउस किताब (विविध विधा रचना संग्रह)
सम्मान : दिशा प्रकाशन द्वारा– दिशा सम्मान, हिंदी चेतना पत्रिका कनाडा द्वारा– हिंदी चेतना सम्मान, तथा जैमिनी सम्मान, प्रतिलिपि पत्र सम्मान 2016. शब्दनिष्ठा समीक्षा सम्मान 2020.
सम्पर्क : ठेका चौकी, महिला थाना के सामने, निकट सलोनी हॉस्पिटल, देशनगर, पीलीभीत, 262001, उ.प्र.
मो. : 7017824491, 9410464495
E-mail : sandhyat70@gmail.com

"आजकल के टीवी सीरियल भी न... पता नहीं... वो कैसे घर होते होंगे जहाँ औरतों के बीच ऐसी चालबाजियाँ खेली जाती होंगी."

सास बहू सीरियल देखते हुए सास ने बड़बड़ाते हुए पास ही सोफे के आगे कुर्सी पर दोनों पांव पसारे आराम से बैठी चाय पीती बहू से कहा.

"जी मम्मी जी... हमें भी ऐसे घर दिखाई नहीं देते... जहाँ ऐसी-ऐसी ओछी हरकतें होती हों... ये टीवी सीरियल वाले भी न जाने कहाँ-कहाँ से ये सब दिमागी खुराफात उठा लाते हैं... मुझे तो ये सब जरा भी समझ नहीं आते." होंठो के दाहिने किनारे को बिचकाते हुए बहू ने सास की हाँ में हाँ मिलायी.

"नानी मुझे पिज्जा खाना है... हाँ, दादी मुझे भी पिज्जा खाना है..."

धेवती और पोती दोनों दादी का पल्लू पकड़े मचल रही थीं.

"चलो हटो तुम दोनों, मेरे पास पेंशन के आखिरी पांच सौ रुपए बचे हैं वक्त जरूरत के लिए. अपनी मामी, मम्मी से कहो... वो ही तुम्हारे चोंचले पूरे करेंगी. हटो भागो यहाँ से और फिर दोपहर में पिज्जा कौन खाता है शाम को अपने मामा से मंगा लेना."

वृद्धा ने हल्की झिड़की देते हुए कहा.

"मम्मी जी बच्चे हैं, इन्हें तो खाने से मतलब बाकी बातों से इन्हें क्या?" बहू ने हँसकर कहा और टीवी की वॉल्यूम थोड़ी ऊँची कर दी.

डिंग डांग डिंग डांग

"सौम्या देख दरवाजे पर कौन है?"

बहू ने टीवी पर नजरें टिकाये अपनी सात साला बिटिया से कहा.

"मम्मी पिज्जा वाला आया है पाँच सौ रुपए माँग रहा है."

बहू ने हड़बड़ाकर पैर से कुर्सी परे धकेली और चौके में जाकर झट से आटे में पानी डालकर हाथ आटे में सान लिये.

बेटी ने जब दोबारा रसोई में जाकर पैसों के लिए कहा तो उसने डाँटते हुए कहा "तुम्हें दिख नहीं रहा, मेरे हाथ आटे में सने हैं..."

खूंट में बंधा पांच सौ का नोट मुट्ठी में दबाये अचकचायी सास... कभी बहू के आटे में सने हाथ... तो कभी टीवी पर आता चालबाजियों वाला सास-बहू सीरीयल देख रही थी. ▣

आठवाँ पुरस्कार प्राप्त लघुकथा

नेम प्लेट

सुधा थपलियाल

"दिनेश की माँ, अभी संतोष ने बताया कि हनुमान मंदिर के पुजारी का किसी ने कत्ल कर दिया", घबरायी सी संतोष की माँ की बातें सुन सबके चेहरे के रंग उड़ गये.

दिनेश की पत्नी रमा ने अपने एक महीने के बच्चे को जोर से अपने आगोश में भींच लिया. पति ऑफिस के काम से अजमेर गए हुए थे. घबराकर उसने अपने सास-ससुर की ओर देखा. गहरी चिंता की लकीरें उनके माथे पर खिंच आयी थीं. जयपुर के एक छोर में बसा पहाड़गंज का माहौल पिछले कुछ दिनों से बहुत तनावपूर्ण चल रहा था. सांप्रदायिक दंगों की आँच उनके मौहल्ले तक आ पहुँची थी. अचानक समवेत स्वर की गर्जना ने सबकी धड़कनों को बढ़ा दिया. संतोष की माँ तेजी से अपने घर की ओर बढ़ी. सास को बच्चा थमा, रमा स्थिति का जायजा लेने छत पर चढ़ गयी. दूर सड़क पर उन्मत्त लोगों के झुंड को हाथों में मशाल उठाये... मार डालो... कत्ल कर दो... एक भी बचने ना पाये... चिल्लाते देख रमा की घिग्घी बंध गयी. घबराकर तेजी से नीचे भागी.

"मम्मी, हममें से कोई नहीं बचेगा..." थरथर काँफते हुए रुंधे गले से रमा बोली.

"दरवाजे ठीक से बंद कर दो..." भयातुर ससुर जी के मुँह से निकला.

बच्चे को पालने में रख रमा और सासजी घर के सब दरवाजों को बंद करने लगे. ससुर जी मुख्य द्वार पर ताला लगाने लगे. अभी ससुर जी ताला लगाकर पलटे भी न थे कि गेट पर खटखट की आवाज ने उनके रोंगटे खड़े कर दिये. जब गेट ताबड़तोड़ बजने लगा तो ससुर जी ने डरते हुए पूछा, "कौन?"

"मैं हूँ हमीद..."

सालों के अपने मित्र और पड़ोसी हमीद की आवाज सुन पलभर के लिए वे असमंजस में आ गये.

"क्या बात है?" थूक घूंटते हुए वे किसी तरह बोले.

तभी मशालों की रोशनी के साथ दैत्य की भाँति दिल दहला लेने वाले शोर में दोनों की आवाजें खो गयीं. वे हड़बड़ाकर काँपते कदमों से तेजी से घर के अंदर जा, दरवाजा बंद कर, अपनी अनियंत्रित हो आयी सांसों को थामने लगे. पूरी रात दहशत भरे वातावरण में आँखों-आँखों में बीत गयी. वह 1990 का दौर था. फोन वगैरह की सुविधा भी नहीं थी. दिनेश से किसी प्रकार का सम्पर्क होना असंभव था.

सुबह होते ही आर.ए.सी की गाड़ियाँ के साइरन की आवाज ने उनकी थमी हुई धड़कनों जैसे एक गति दे दी.

सुधा थपलियाल

एम.ए. अर्थशास्त्र. 2004 से लेखन में सक्रिय हूँ कथाबिंब, पुष्पगंधा, वांग्मय, दिल्ली प्रेस, वनिता आदि पत्रिकाओं में मेरी कहानियाँ प्रकाशित और पुरस्कृत हो चुकी हैं. लमही, युगवाणी, अमर उजाला, क्षितिज के पार आदि पत्र-पत्रिकाओं में समीक्षायें व लेख प्रकाशित हो चुके हैं.

सम्पर्क : 51/11 हरिद्वार रोड, देहरादून (उत्तराखंड) 248001

मो. : 7248725245, 7906389251

E-mail : sudhathapliyal@rediffmail.com

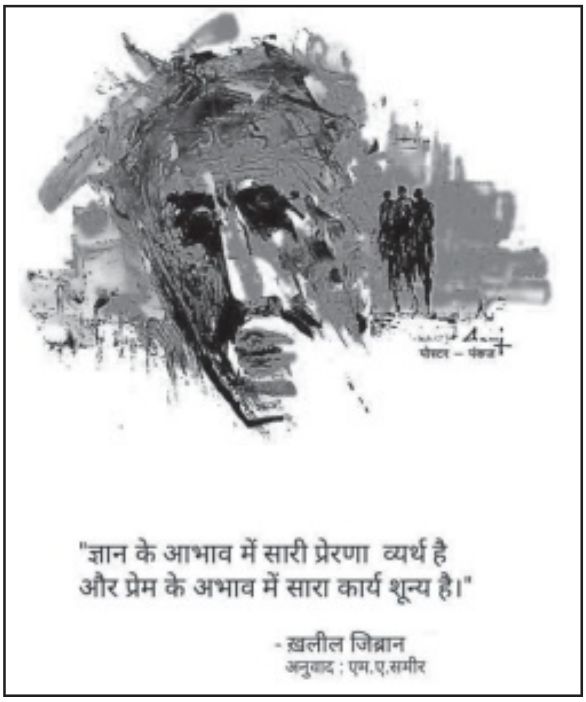

पोस्टर : पंकज दीक्षित

"जल्दी निकलो यहाँ से..." जोर से गेट को खटका, एक जवान ने उनको आदेश दिया.

रमा और सास जी कुछ साथ ले जाने के लिए कपड़े और कीमती सामान बटोरने लगीं.

"इतना समय नहीं है," पैरामिलिट्री के जवान ने सख्त आदेश दिया, "और हाँ, इस बच्चे को ठीक से कपड़े से ढक दो."

जल्दबाजी में दो-चार कपड़े उठा, बच्चे को पूरी तरह से ढक अन्य लोगों से लदी गाड़ी में तीनों घुस गये. उन जवानों ने मुख्य द्वार को बंद करने का समय भी न दिया. गाड़ी में लोगों के बीच से दिनेश के पिता ने देखा कि हमीद हाथ हिलाकर कुछ इशारा कर रहा है, इससे पहले वे कुछ समझते, गाड़ी चल पड़ी. आँखों से ओझिल होते वे बस इतना ही देख पाये कि हमीद पूरी ताकत से उनके घर की नेम प्लेट को उखाड़ रहा है. बेबसी, शंका, नफरत जैसी अनेक अनुभूतियों ने उनके ह्दय में अपने पाँव जमा लिये.

शहर में कर्फ्यू लग गया. सांप्रदायिकता की आग को ठंडा होने में पंद्रह दिन लग गये. पंद्रह दिन बाद वापस आने पर, उन्हें अपनी गली पहचान में नहीं आ रही थी. हर जगह बरबादी का मंजर बिखरा पड़ा था. अपने घर को सुरक्षित देख सबने राहत की साँस ली, लेकिन घर पर हमीद अंसारी के नाम की नेम प्लेट नश्तर की तरह चुभ गयी, साथ ही गेट पर लगे ताले ने उठती शंकाओं को पुख्ता कर दिया. इतने में देखा कि हाथ में कुछ उठाये सामने से हमीद चला आ रहा है.

"आपकी नेम प्लेट," अपने मित्र को नेम प्लेट पकड़ा, ताला खोलते हुए हमीद ने कहा.

▣

नौवाँ पुरस्कार प्राप्त लघुकथा

इनटॉलरेंस

दिव्या शर्मा

"कूड़ा.." घर के बाहर कूड़े वाले ने जोर से आवाज लगाते हुए गेट पर हाथ मारा.

"ये कमीना भी उसी वक्त आता है जब इंसान जरूरी काम कर रहा हो..," भुनभुनाते हुए फोन मेज पर रखकर, दृष्टि डस्टबिन उठाकर बाहर की ओर लपकी.

बाहर जाकर देखा तो कूड़ेवाला तीन मकान छोड़कर खड़ा था और सबके कूड़े में से कूड़ा छांट रहा था.

"अब आकर ले जा... कब तक हाथ में कूड़ा लिये खड़ी रहूंगी!" तमतमाकर वह चिल्लायी.

"आ रहा हूँ दो मिनट रुकिए." उसने जवाब दिया और फिर से कूड़ा छांटने लगा.

"अब इसका भी इंतजार करो... कुछ कह दो तो नखरे दिखाने लगेंगे... ये इनटॉलरेंस किसी को दिखाई नहीं देता." बुदबुदाते हुए वह डस्टबिन पटक अंदर चली गयी और फोन उठाकर बाहर आ गयी साथ ही फेसबुक पर 'इनटॉलरेंस का शिकार होती महिलाएँ' शीर्षक पर लिखे गये लेख पर चल रही बहस में शामिल हो गयी.

"सबसे ज्यादा बर्दाश्त कर रही हैं हम औरतें... हर जगह हर संस्कृति में हमें दबाया जाता है." दृष्टि ने प्रतिउत्तर में एक टिप्पणी लिख दी थी.

"कौन दबा रहा है मैडम? असल में औरतें बहुत होशियार होती हैं. फायदे के लिए खुद को बेचारी बनाये रखना चाहती हैं." किसी ने उसकी टिप्पणी के उत्तर में लिख दिया.

"औरतें कभी फायदा नहीं उठातीं बल्कि तुम जैसे लोग अपनी माँ का भी फायदा उठाते हो." उसकी महिला मित्र ने जवाबी टिप्पणी लिख दी.

इसके बाद उसके विरुद्ध ही जैसे सबने मोर्चा खोल दिया.

किसी ने लिखा कि महावारी पर नौटंकी करती यह औरतें झूठा फेमिनिज्म का एजेंडा चला रही हैं. किसी ने उच्छृंखल कहा तो किसी ने लिखा कि इसे औरतों के साथ न जोड़ो. किसी ने लिखा कि यह तुम्हारा झूठा नारीवाद है और किसी ने वामपंथी कह कुछ गालियां लिख दीं.

दिव्या शर्मा

जन्म स्थान : देहरादून, उत्तराखंड.

शिक्षा : स्नातक कला वर्ग में, स्नातकोत्तर प्रथम वर्ष समाजशास्त्र में, डिप्लोमा पर्यटन में.

साहित्यक परिचय : "नुक्कड़ नाटक अभिनय संस्था प्रयागराज" के स्थापना दिवस पर मेरी पांच कहानियों को लेकर प्रस्तुत की गई नाटय प्रस्तुति "आईना समाज का" कुंभ प्रयागराज के बाद एक बार फिर माघ मेला अरेल घाट संगम प्रयागराज में मंचित हुआ.

मो. : 7303113924

E-mail : sharmawriterdivya@gmail.com

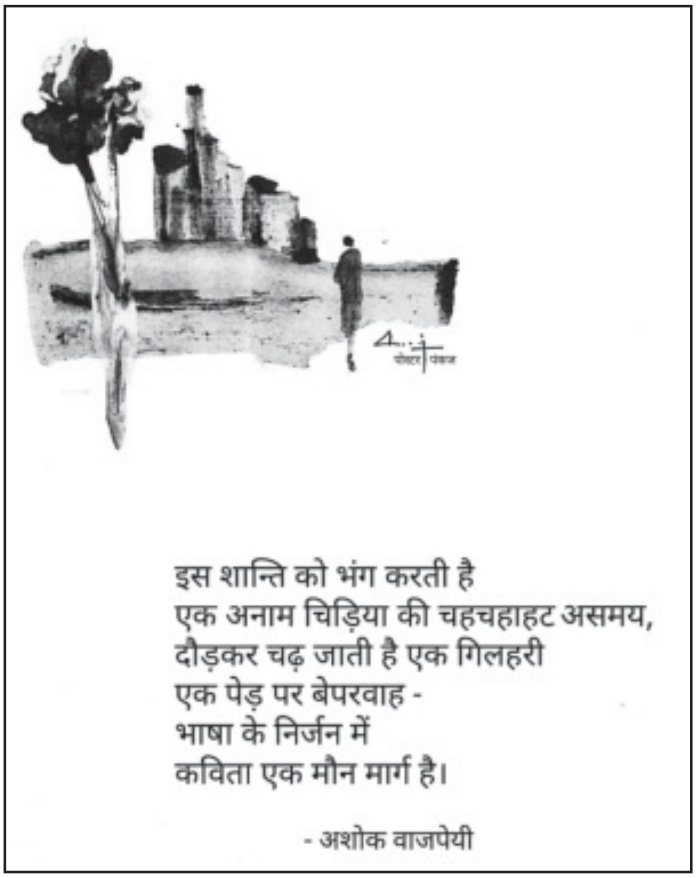

कविता पोस्टर : पंकज दीक्षित

दृष्टि सबको जवाब दे रही थी कि तभी उसे परेशान करने यह कूड़ेवाला आ गया. वह अब तक वहीं खड़ा था. दृष्टि का गुस्सा बढ़ता जा रहा था.

दृष्टि पोस्ट पर आये कमेंट्स को देखने लगी तभी एक कमेंट ने उसके दिमाग के पारे को और बढ़ा दिया. किसी ने लिखा कि इस देश में सिर्फ मुसलमान और दलित असहिष्णुता के शिकार हो रहे हैं... इससे ध्यान भटकाने के लिए तुम जैसी महिलाएँ ऐसे प्रपंच रचती हैं.

"सामने होता तो इसकी गर्दन दबा देती... ओ आयेगा कि नहीं तू?" कमेंटकर्ता को गाली देते हुए वह कूड़ेवाले पर फिर चिल्लायी.

अगले पल वह उसके सामने था. उसने दृष्टि के हाथ से डस्टबिन लिया और अपनी गाड़ी में उलट दिया.

वापस मुड़ती दृष्टि कुछ देख अचानक ठिठक गयी. कूड़ेवाले की गाड़ी पर नजर डालकर कुछ देखने लगी. वहाँ पड़े मौहल्ले भर के कूड़े को उसने अपने हाथों से अलग-अलग किया हुआ था जिनमें शामिल थे खून से सने सेनिटरी पैड्स... डायपर्स... और न जाने क्या-क्या. यह देख वह खुद पर शर्म महसूस करने लगी और सोच में पड़ गयी कि समाज में इनटॉलरेंस के असली शिकार कौन हैं?

दृष्टि की उंगली फोन पर एक बार और थिरक उठी... अब उसके कमेंट में मुद्दा कूड़ेवाला था.

▣

दसवाँ पुरस्कार प्राप्त लघुकथा

डाकू

जयमाला

यह हमारे शहर का सबसे साफ-सुथरा और नामचीन अस्तपाल है. चमचमाते ग्रेनाईट से सजे फर्श और दीवारों के शानदार रिसेप्शन की स्टील की कुर्सियों में मैं पिछले पाँच घंटों से बैठी हूँ. पिछले छः दिनों के असफल प्रयास के बाद आज मुझसे कहा गया है कि मेरे बेटे को आज डिस्चार्ज कर दिया जाएगा.

यहाँ आने-जाने वाला हर चेहरा भयभीत, आशंकित और चिंतित है. रिसेप्शन पर बैठी स्मार्ट, बेलड्रेस्ड और वाकपटु लड़कियाँ पूरी कुशलता के साथ व्यस्त हैं. बीच-बीच में चमचमाते जूते, हाईहील सैंडिल, हीरे की अगूँठियों से सुसज्जित चुस्त-दुरुस्त उच्च वेतनभोगी मैनेजमेंट स्टाफ का दिशा-निर्देश जारी है.

मेरे पास वाली कुर्सी पर एक दादी अपने चार वर्षीय पोते के साथ बैठी हैं. उनका बेटा बहू को इमरजेंसी वार्ड में भर्ती को लेकर व्यस्त है. बच्चा अपनी माँ के पास जाने की जिद में है. दादी उसका ध्यान हटाने के प्रयास में नए-नए प्रयोग में लगी है. दो वाक्य बोलते-बोलते वह टोक देता है "नहीं ये वाली नहीं... नई वाली..."

अब दादी गब्बर सिंह की कहानी सुना रही हैं... बच्चे की जिज्ञासु आँखें चमकने लगती हैं... भयभीत गाँव... ठाकुर... बंदूक की ठाँय-ठाँय... जय-वीरू की बहादुरी... ... बच्चा पूरी तरह मगन है...

इतने में कैश काउंटर पर एक आदमी जोर-जोर से चिल्लाने लगता है "मैं साइन नहीं करूँगा... जब मैं आपकी सेवा से संतुष्ट नहीं हूँ तो साइन क्यों करूँ? ...हमने जमीन बेचकर अब तक दस लाख रुपया जमा कराया... इतने में तो हम मुंबई से इलाज करवाकर वापस आ जाते... आज फिर से दो लाख चाहिए... न ही मेरा मरीज ठीक हुआ न ही समय पर आप लोगों ने डिस्चार्ज किया... उसकी आँखों में सबकुछ जला देने वाली आग धधक रही थी...

बच्चे को इन सब बातों में कोई दिलचस्पी नहीं है. उसे तो कहानी सुनने में रस आ रहा है. वह दादी का ध्यान वापस कहानी की ओर खींच लाता है. "फिर क्या हुआ दादी माँ! गब्बर मर गया?"

"नहीं बेटा! गब्बर कहाँ मरते हें! वे तो बस भेष बदल लेते हैं!" बेबस और हताश दादी ने गहरी साँस लेते हुए कहा.

बच्चा सहमकर दादी के सीने से चिपक जाता है. लेकिन अगले ही पल कभी न खत्म होने वाली गोलियों की बौछार करने वाली बंदूक के सपने में खो जाता है...

▣

जयमाला

जन्म : 4 सितम्बर 1974 को झारखंड के पाकुर जिले में.

शिक्षा : सुन्दरवती महिला कॉलेज भागलपुर से स्नातक.

अखिल भारतीय लघुकथा प्रतियोगिताओं में रचनाएँ पुरस्कृत एवं चर्चित. 2014 में प्रकाशित कहानी रंगेहाथ खास तौर पर चर्चित.

संप्रति : कुछ वर्षों तक पत्रकारिता का अनुभव, संप्रति स्वतंत्र लेखन.

सम्पर्क : अंशमात्र, विकास नगर, रोड न. 2 हेसाग, हटिया, राँची-834004

मो. : 6204402970

E-mail : jayaansh.ranchi@gmail.com